भारत कानून पुस्तकालय वेब संस्करण

इस उत्पाद का लाइसेंस है: राव धनबीर सिंह

डोसिड # IndLawLib/1824350

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

डिवीजन बेंच

रामविलास - अपीलकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य - प्रतिवादी

(इससे पहले : अरविंद कुमार मिश्रा-I और मनीष माथुर, जे.जे.)

बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट याचिका संख्या 80/2022

निर्णय दिनांक : 11-04-2022

भारतीय संविधान, 1950 - अनुच्छेद 14, 19, 21 और 22 - अभियुक्त को मौखिक रूप से समन भेजना - यदि किसी पुलिस स्टेशन में कोई आवेदन या शिकायत दी जाती है, जिसमें जांच और अभियुक्त की उपस्थिति की आवश्यकता होती है, तो दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत निर्धारित उचित कार्रवाई का पालन किया जाना चाहिए, जिसमें ऐसे व्यक्ति को लिखित नोटिस दिया जाना शामिल है, लेकिन वह भी केवल मामला दर्ज होने के बाद। यदि उस समय कोई जांच अधिकारी नहीं है, तो अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों को ऐसा नोटिस या समन जारी करने से पहले स्टेशन प्रभारी की अनुमति/अनुमोदन लेना आवश्यक है। किसी भी हालत में किसी अभियुक्त या किसी अन्य व्यक्ति को थाना प्रभारी की सहमति/अनुमोदन के बिना अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों द्वारा मौखिक रूप से थाने में नहीं बुलाया जा सकता है। - किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता और सम्मान को पुलिस अधिकारियों के मौखिक आदेश मात्र से खतरे में नहीं डाला जा सकता है। - वर्तमान मामले में पुलिस कर्मियों द्वारा की गई कार्रवाई संविधान के अनुच्छेद 14, 19, 21 और 22 के तहत याचिकाकर्ताओं को दिए गए अधिकारों का स्पष्ट उल्लंघन दर्शाती है, क्योंकि याचिकाकर्ताओं को मौखिक रूप से बुलाने और उसके बाद थाने में उनकी हिरासत की प्रक्रिया प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज किए बिना ही अपनाई गई है। - राज्य अपने जवाबी हलफनामे में किसी भी कानून की व्याख्या नहीं कर पाया है

जिसके तहत ऐसी प्रक्रिया का पालन किया जा सकता था, खासकर तब जब याचिकाकर्ताओं को बुलाने वाला पुलिस कर्मी मामले का जांच अधिकारी भी नहीं था। - आवागमन का अधिकार जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का एक अनिवार्य हिस्सा है, जिसे राज्य के अधिकार के तहत इस तरह से नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। राज्य और उसके तंत्रों का यह परम कर्तव्य है कि वे सदैव सतर्क रहें, ताकि संविधान के भाग (III) के अंतर्गत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों का उल्लंघन न हो, विशेषकर किसी वैध कानून के प्राधिकार के बिना, जिसका व्यवस्थित समाज पर हानिकारक प्रभाव पड़ता हो।

<u>उपस्थित पक्षों के वकील</u>

अपीलकर्ता की ओर से पत्र याचिका; प्रतिवादी की ओर से जी.ए.

संदर्भित मामले

- ए.के. गोपालन बनाम मदरसा राज्य, एआईआर 1950 सुप्रीम कोर्ट 27
- अनुज गर्ग बनाम होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया [(2008) 3 एससीसी 1]
- फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम दिल्ली केंद्र शासित प्रदेश [(1981) 1 एससीसी 608: 1981 एससीसी (सीआरआई) 212]
- केएस पुट्टा स्वामी बनाम भारत संघ, 2017 (10) एससीसी 1
- खड़क सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 1963 सुप्रीम कोर्ट 1295
- मेनका गांधी [मेनका गांधी बनाम भारत संघ, (1978) 1 एससीसी 248]
- राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ, 2014 (5) एससीसी 438
- रुस्तम कैवसजी कूपर बनाम भारत संघ, 1970 1 एससीसी 248

प्रलय

मनीष माथुर, जे. - विद्वान ए.जी.ए. ने संक्षिप्त जवाबी हलफनामा दायर किया है, उसे रिकार्ड में ले लिया गया है।

2. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री श्यामेन्द्र सिंह, जिनकी शक्ति रिकॉर्ड पर ली गई है, श्री एसपी सिंह, विद्वान अतिरिक्त सरकारी वकील को सुना गया और इस बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट याचिका के रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री का अवलोकन किया गया।

3. 8 अप्रैल, 2022 को पारित हमारे पिछले आदेश के अनुसार, याचिकाकर्ताओं की बेटी द्वारा दायर पत्र याचिका को बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका मानते हुए, इस न्यायालय के संज्ञान में कुछ तथ्य लाए गए कि याचिकाकर्ताओं, सावित्री और रामविलास को पुलिस स्टेशन-महिला थाना, लखनऊ में बुलाया गया है, जहाँ से वे अभी तक वापस नहीं आए हैं। बंदी प्रत्यक्षीकरण के रूप में माने जाने के बाद याचिका पर हमारे द्वारा सुनवाई की गई, जिसमें राज्य की ओर से

विद्वान एजीए ने हमारे संज्ञान में यह तथ्य लाया कि पुलिस स्टेशन पर ऐसी कोई घटना नहीं हुई जैसा कि कहा गया है।

4. आज याचिकाकर्ता सावित्री और रामविलास अपनी बेटी सोरोजिनी के साथ इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए, जिसकी पहचान उनके वकील ने की थी और याचिकाकर्ताओं ने बताया कि कुछ पुलिसकर्मी उनके पास आए और उनसे थाने में उपस्थित होने को कहा। इसके बाद याचिकाकर्ता पुलिस थाने गए, जहां कथित तौर पर उन्हें हिरासत में लिया गया और कुछ पुलिसकर्मियों ने उन्हें धमकाया।

5. लखनऊ के महिला थाने में इंस्पेक्टर के पद पर तैनात सुश्री दुर्गावती द्वारा शपथपूर्वक दिए गए संक्षिप्त जवाबी हलफनामे में, जो व्यक्तिगत रूप से न्यायालय में उपस्थित हैं, इस न्यायालय के संज्ञान में कुछ तथ्य लाए गए हैं कि याचिकाकर्ता 08.04.2022 को दोपहर करीब 12 बजे थाने आए थे और अपना बयान दर्ज कराने के बाद उन्हें उसी दिन दोपहर करीब 3.30 बजे थाने से जाने दिया गया। शिकायतकर्ता- श्रीमती सुषमा देवी और उनके ससुराल वालों यानी याचिकाकर्ताओं के बीच विवाद पैतृक संपत्ति के बंटवारे से संबंधित है। शिकायतकर्ता के पति- विनय कुमार जो रामविलास के बेटे हैं, भी अपनी पत्नी का समर्थन कर रहे हैं और पैतृक संपत्ति में अपना हिस्सा मांग रहे हैं।

6. अभिसाक्षी दुर्गावती 8.4.2022 को न्यायालय को सूचना प्रदान करते समय हुई गलती के लिए न्यायालय को हुई असुविधा के लिए बिना शर्त माफी मांगती है, जब यह याचिका अल्प सूचना पर सूचीबद्ध की गई थी। यह गलती जानबूझकर या जानबूझकर नहीं की गई थी, बल्कि हेड कांस्टेबल संख्या 1681 शैलेंद्र सिंह की लापरवाही और अवज्ञा के कारण हुई थी, जिन्होंने अभिसाक्षी दुर्गावती को यह नहीं बताया था कि उन्होंने श्री राम विलास और उनकी पत्नी सावित्री को बुलाया है। अभिसाक्षी दुर्गावती ने उनके खिलाफ उचित अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के लिए पुलिस उपायुक्त (मध्य), जिला लखनऊ, आयुक्तालय को एक रिपोर्ट भेजी है, जिसकी प्रतिलिपि इस हलफनामे के अनुलग्नक संख्या 3 के रूप में संलग्न की गई है।

7. दुर्गावती द्वारा यह कहा गया है कि याचिकाकर्ताओं को अपमानित या परेशान करने का कोई जानबूझकर प्रयास नहीं किया गया था, बल्कि यह संबंधित कांस्टेबल का दुराचार और अवज्ञा था, अन्यथा पुलिस के लिए याचिकाकर्ताओं के साथ किसी भी तरह के दुर्व्यवहार में शामिल होने का कोई कारण नहीं था। भविष्य में पुलिस अपनी गतिविधियों के प्रति सचेत रहेगी।

8. इस मामले में हम विचार-विमर्श के बाद बिना किसी हिचकिचाहट के यह कहते हैं कि ऐसा प्रतीत होता है कि पुलिस कर्मियों में से कोई व्यक्ति संकट का फायदा उठाकर इस स्थिति का फायदा उठा रहा है, जिससे निजी पक्षों को नुकसान हो रहा है और पुलिस व्यवस्था और विशेष रूप से संबंधित थाने की कार्यकुशलता को भी नुकसान पहुंच रहा है। संबंधित पुलिस अधिकारियों का यह दायित्व और दायित्व है कि वे इस शरारत को शुरू में ही रोक दें।

9. किसी नागरिक का अधिकार है कि उसे राज्य या उसके साधनों द्वारा बिना किसी कानून के समर्थन के हिरासत में न लिया जाए या रोका न जाए, जो कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(डी), 21 और 22 में परिलक्षित होता है। अनुच्छेद 19(1)(डी) नागरिकों के भारत के पूरे क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने के अधिकारों की रक्षा करता है, जिसमें उपधारा 5 आम जनता के हित में या किसी अनुसूचित जनजाति के हितों की सुरक्षा के लिए उचित प्रतिबंध लगाती है। अनुच्छेद 21 गैर नागरिकों सहित किसी भी व्यक्ति के जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा से संबंधित है। संविधान के अनुच्छेद 22 में कुछ मामलों में गिरफ्तारी और हिरासत के खिलाफ सुरक्षा दी गई है।

10. 1950 में ही माननीय न्यायमूर्ति फजल अली ने **ए.के. गोपालन बनाम स्टेट ऑफ मदरसा, ए.आई.आर. 1950 सुप्रीम कोर्ट 27** के मामले में अपने असहमतिपूर्ण फैसले में कहा था कि 'प्रतिबंध' और 'वंचन' शब्दों के बीच कोई विरोधाभास नहीं है। यह माना गया कि आवागमन के अधिकार पर प्रतिबंध कई तरह के रूप ले सकता है और खंड (v) में प्रतिबंध सबसे उपयुक्त अभिव्यक्ति होगी, ताकि आवागमन की स्वतंत्रता के पूर्ण से लेकर आंशिक वंचन तक के सभी रूपों को कवर किया जा सके। यह भी माना गया कि दंड संहिता प्राथमिक रूप से या अनिवार्य रूप से आवागमन की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध नहीं लगाती है और यह कहना गलत है कि यह स्वतंत्र रूप से आवागमन के अधिकार पर प्रतिबंध लगाने वाला कानून है। वास्तव में संहिता का प्राथमिक उद्देश्य अपराध को दंडित करना माना गया था, न कि आवागमन को प्रतिबंधित करना। उनके माननीय न्यायाधीश ने आगे कहा कि दंडात्मक हिरासत निवारक हिरासत से अनिवार्य रूप से भिन्न है और किसी व्यक्ति को दंडात्मक रूप से तभी हिरासत में लिया जा सकता है जब अपराध करने के लिए मुकदमा चलाया जाता है और जब उसका अपराध किसी सक्षम न्यायालय में सिद्ध हो जाता है, जिसके बाद दोषी व्यक्ति उसके विरुद्ध अपील कर सकता है और अंतिम निर्णय एक उचित प्रतिबंध होगा जो अनुच्छेद 19(1)(डी) के तहत अधिकार का पालन नहीं कर सकता है। हालाँकि, दंडात्मक रूप से हिरासत में लिए गए व्यक्ति को ऐसी किसी भी बाधा का सामना करने की आवश्यकता नहीं होती है।

11. यह माना गया कि 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' और 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' के अर्थ व्यापक और संकीर्ण हैं। व्यापक अर्थ में इनमें न केवल गिरफ्तारी और हिरासत से छूट शामिल है, बल्कि बोलने की स्वतंत्रता, संगठन बनाने की स्वतंत्रता आदि भी शामिल हैं, जबकि संकीर्ण अर्थ में इनका अर्थ गिरफ्तारी और हिरासत से छूट है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता की अवधारणा का उपयोग न केवल गिरफ्तारी से छूट के अर्थ में किया गया, बल्कि इसमें आंदोलन और आवागमन की स्वतंत्रता भी शामिल है।

12. हालांकि, मौलिक अधिकारों से संबंधित विभिन्न अनुच्छेदों के बीच परस्पर प्रभाव के संबंध में, ए.के. गोपालन (सुप्रा) के मामले में बहुमत का दृष्टिकोण यह था कि वे बिना किसी अतिव्यापन के अलग-अलग और पृथक थे और इस प्रकार जस्टिस फजल अली के विचार अल्पमत के दृष्टिकोण रहे।

13. उक्त पहलू पर सुप्रीम कोर्ट ने **खड़क सिंह बनाम स्टेट ऑफ यूपी, एआईआर 1963 सुप्रीम कोर्ट 1295** के मामले में फिर से विचार किया, जिसमें एके गोपालन (सुप्रा) के बहुमत के दृष्टिकोण की पुष्टि उनके माननीय न्यायमूर्ति सुब्बा राव द्वारा लिए गए असहमतिपूर्ण दृष्टिकोण से की गई, जिन्होंने एके गोपालन (सुप्रा) के मामले में अल्पमत के दृष्टिकोण का पालन करते हुए कहा कि संविधान के भाग (III) द्वारा प्रदत्त अधिकारों में अतिव्यापी क्षेत्र हैं और जहां किसी कानून या राज्य की कार्रवाई को भाग (III) के विभिन्न अनुच्छेदों में अधिकारों का उल्लंघन करने के रूप में चुनौती दी जाती है, राज्य को प्रत्येक अनुच्छेद के परीक्षण को व्यक्तिगत रूप से पूरा करना चाहिए। यह माना गया कि 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' की अभिव्यक्ति व्यापक है और स्वतंत्र रूप से घूमने का अधिकार 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' का एक गुण है। यह माना गया कि संविधान के अनुच्छेद 19 और 21 में इंगित अधिकार स्वतंत्र मौलिक अधिकार थे यह भी माना गया कि यदि अनुच्छेद 21 के तहत किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकार का उल्लंघन किया जाता है, तो राज्य कार्रवाई को बनाए रखने के लिए केवल कानून पर निर्भर हो सकता है, लेकिन अनुच्छेद 19 में निर्धारित परीक्षणों को भी पूरा करना आवश्यक होगा। यह भी माना गया कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार में न केवल किसी व्यक्ति की गतिविधियों पर लगाए गए प्रतिबंधों से मुक्त होने का अधिकार शामिल है, बल्कि उसके निजी जीवन पर अतिक्रमण से भी मुक्त होना चाहिए।

14. ए.के. गोपालन (सुप्रा) और खड़क सिंह (सुप्रा) के मामलों में अल्पमत के विचारों को इसके बाद रुस्तम कैवसजी कूपर बनाम भारत संघ, 1970, 1 एससीसी 248 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संविधान पीठ के फैसले में बरकरार रखा गया था ।

15. तत्पश्चात राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ, 2014 (5) एससीसी 438 के मामले में अनुच्छेद 21 के दायरे की जांच करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:- "73. भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 इस प्रकार है:

> "21. जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण। किसी भी व्यक्ति को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।"
>
> अनुच्छेद 21 भारतीय संविधान का हृदय और आत्मा है, जो जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों की बात करता है। जीवन का अधिकार मूल मौलिक अधिकारों में से एक है और राज्य को भी उस अधिकार का उल्लंघन करने या उसे छीनने का अधिकार नहीं है। अनुच्छेद 21 जीवन के उन सभी पहलुओं को शामिल करता है जो किसी व्यक्ति के जीवन को सार्थक बनाते हैं। अनुच्छेद 21 मानव जीवन की गरिमा, किसी की व्यक्तिगत स्वायत्तता, किसी की निजता के अधिकार आदि की रक्षा करता है। गरिमा के अधिकार को जीवन के अधिकार का एक अनिवार्य हिस्सा माना गया है और यह सभी व्यक्तियों को मनुष्य होने के नाते प्राप्त होता है। **फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम यूटी ऑफ दिल्ली [(1981) 1 एससीसी 608: 1981 एससीसी (सीआरआई) 212]** (एससीसी पृ. 618-19, पैरा 7 और 8) में , इस न्यायालय ने माना कि गरिमा का

अधिकार हमारी संवैधानिक संस्कृति का एक अनिवार्य हिस्सा है, जो व्यक्तियों के पूर्ण विकास और विकास को सुनिश्चित करना चाहता है और इसमें "विभिन्न रूपों में खुद को अभिव्यक्त करना, स्वतंत्र रूप से घूमना और साथी मनुष्यों के साथ घुलना-मिलना" शामिल है। *** **** ******

75. जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, अनुच्छेद 21 व्यक्ति की "व्यक्तिगत स्वायत्तता" की सुरक्षा की गारंटी देता है। **अनुज गर्ग बनाम होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया [(2008) 3 एससीसी 1] (एससीसी पृष्ठ 15, पैरा 34-35)** में , इस न्यायालय ने माना कि व्यक्तिगत स्वायत्तता में दूसरों द्वारा हस्तक्षेप न किए जाने का नकारात्मक अधिकार और व्यक्तियों के अपने जीवन के बारे में निर्णय लेने, खुद को अभिव्यक्त करने और किन गतिविधियों में भाग लेना है, यह चुनने का सकारात्मक अधिकार दोनों शामिल हैं। लिंग का आत्मनिर्णय व्यक्तिगत स्वायत्तता और आत्म-अभिव्यक्ति का एक अभिन्न अंग है और यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत व्यक्तिगत स्वतंत्रता के दायरे में आता है।

16. इस प्रकार यह माना गया कि अनुच्छेद 21 मानव जीवन की गरिमा और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से संबंधित मूल मौलिक अधिकार की रक्षा करता है।

17. के.एस. पुट्टा स्वामी बनाम भारत संघ, 2017 (10) एस.सी.सी. 1 के मामले में , यह निम्नानुसार माना गया है: -

"119. जीना गरिमा के साथ जीना है। संविधान के प्रारूपकारों ने समाज के बारे में अपनी कल्पना को परिभाषित किया जिसमें अन्य स्वतंत्रताओं के साथ-साथ स्वतंत्रता और गरिमा पर जोर देकर संवैधानिक मूल्यों को प्राप्त किया जाएगा। गरिमा इतनी मौलिक है कि यह भाग III द्वारा व्यक्ति को गारंटीकृत अधिकारों के मूल में व्याप्त है। गरिमा वह मूल है जो मौलिक अधिकारों को एकजुट करती है क्योंकि मौलिक अधिकार प्रत्येक व्यक्ति के लिए अस्तित्व की गरिमा प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। गोपनीयता अपने साथ जुड़े मूल्यों के साथ व्यक्ति को गरिमा सुनिश्चित करती है और यह केवल तभी संभव है जब जीवन का आनंद गरिमा के साथ लिया जा सके, तभी स्वतंत्रता वास्तविक सार हो सकती है। गोपनीयता गरिमा की पूर्ति सुनिश्चित करती है और यह एक मूल मूल्य है जिसे जीवन और स्वतंत्रता की सुरक्षा प्राप्त करने के लिए अभिप्रेत है।"

18. उपरोक्त का संयुक्त वाचन स्पष्ट रूप से सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लिए गए सुसंगत दृष्टिकोण को इंगित करता है कि सम्मान के साथ जीने का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत परिकल्पित जीवन के अधिकार का एक अनिवार्य हिस्सा है क्योंकि निजता के अधिकार के साथ मिलकर ऐसा अधिकार उन मूल मूल्यों की पूर्ति सुनिश्चित करता है जिन्हें जीवन और स्वतंत्रता की सुरक्षा प्राप्त करने का इरादा है। केएस पुट्टा स्वामी (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना है कि अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत स्वतंत्रता और स्वतंत्रता की व्याख्या इस प्रकार की गई है कि जीवन का मतलब केवल एक भौतिक

अस्तित्व नहीं है और वास्तव में इसमें वे सभी क्षमताएँ शामिल हैं जिनके द्वारा जीवन का आनंद लिया जाता है। अनुच्छेद 21 के अंतर्गत 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' के दायरे की व्याख्या इस प्रकार की गई है कि ऐसे अधिकारों पर प्रतिबंध लगाने वाली प्रक्रिया निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित होनी चाहिए तथा अनुच्छेद 14, 19 और 21 का संयोजन उक्त अनुच्छेदों के अंतर्गत गारंटीकृत अधिकारों के बीच अंतर्संबंध को मान्यता देता है तथा निष्पक्षता और गैर-भेदभाव की ऐसी अपेक्षाएं अनुच्छेद 21 के मूल और प्रक्रियात्मक दोनों पहलुओं को जीवंत बनाती हैं। यह माना गया है कि जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्रभावित करने वाले किसी भी कानून या राज्य की कार्रवाई का मूल्यांकन उसके उद्देश्य के संदर्भ में नहीं बल्कि उसके प्रभाव और मौलिक अधिकारों पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर किया जाना चाहिए।

19. ए.के. गोपालन (सुप्रा) के मामले में फजल अली जे. की यह टिप्पणी कि अनुच्छेद 21 का उद्देश्य जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करना है और यदि मौलिक अधिकारों से संबंधित कानून के प्राथमिक सिद्धांत को नजरअंदाज किया जाए और बहिष्कृत किया जाए तो यह एक अनिश्चित सुरक्षा होगी और ऐसी सुरक्षा पाने लायक नहीं होगी जो वर्तमान संदर्भ में बिल्कुल उपयुक्त है। के.एस. पुट्टा स्वामी (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न निर्णयों के संदर्भ में अनुच्छेद 21 की व्याख्या इस प्रकार की है:-

> 283. प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण।- किसी भी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।'
>
> **यदि इस अनुच्छेद को मेनका गांधी [मेनका गांधी बनाम भारत संघ, (1978) 1 एससीसी 248]** में बताए गए व्याख्यात्मक सिद्धांत के अनुसार विस्तारित किया जाए तो यह इस प्रकार होगा:
>
> 'किसी भी व्यक्ति को वैध कानून द्वारा स्थापित निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित प्रक्रिया के अनुसार ही उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित किया जाएगा।'
>
> विपरीत सकारात्मक रूप में, विस्तारित अनुच्छेद इस प्रकार लिखा जाएगा:
>
> 'किसी व्यक्ति को वैध कानून द्वारा स्थापित निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित प्रक्रिया के अनुसार उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित किया जा सकता है।'"
>
> के.एस. पुट्टा स्वामी (सुप्रा) के मामले में यह माना गया है कि जब कानून या राज्य की कार्रवाई की वैधता पर इस आधार पर सवाल उठाया जाता है कि यह अनुच्छेद 21 के तहत निहित गारंटी का उल्लंघन करता है, तो चुनौती का दायरा केवल इस बात तक सीमित नहीं है कि जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करने की प्रक्रिया निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित है या नहीं, बल्कि मनमानी के खिलाफ गारंटी और जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा के बीच के अंतर्संबंध तक विस्तारित होता है, जो एक

सुगम विमान में संचालित होता है क्योंकि वंचित करने की प्रक्रिया निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित होनी चाहिए क्योंकि अनुच्छेद 14 प्रक्रिया और कानून की अभिव्यक्ति दोनों को प्रभावित करता है।

केएस पुट्टा स्वामी (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने तीन आवश्यकताओं का संकेत दिया है जिन्हें किसी व्यक्ति पर लगाए गए प्रतिबंधों को मौलिक अधिकारों के दायरे में रखने के लिए पूरा किया जाना चाहिए। यह माना गया है कि इस तरह के प्रतिबंध लगाने की पहली आवश्यकता अनुच्छेद 21 के व्यक्त अधिकारों पर किसी भी तरह के अतिक्रमण को उचित ठहराने के लिए मौजूद कानून पर आधारित होनी चाहिए। यह माना गया है कि संविधान के भाग (III) के तहत गारंटीकृत अधिकारों पर प्रतिबंध लगाने के लिए कानून का अस्तित्व एक आवश्यक आवश्यकता है।

दूसरी बात यह है कि राज्य की ऐसी कार्रवाई या कानून जो प्रतिबंध लगाता है, अनुच्छेद 14 द्वारा निर्धारित तर्कसंगतता के दायरे में आता है, जो राज्य की मनमानी कार्रवाई के विरुद्ध गारंटी है।

तीसरा, प्रतिबंध लगाने की आवश्यकता यह सुनिश्चित करती है कि अपनाए गए साधन, प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के समानुपातिक हों, क्योंकि समानुपातिकता, मनमाने राज्य कार्रवाई के विरुद्ध गारंटी का एक आवश्यक पहलू है।

अनुच्छेद 21 के तहत परिकल्पित जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की अवधारणा की व्याख्या के.एस. पुट्टा स्वामी (सुप्रा) के मामले में इस प्रकार की गई है:-

"318. जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता अविभाज्य अधिकार हैं। ये ऐसे अधिकार हैं जो एक गरिमापूर्ण मानव अस्तित्व से अविभाज्य हैं। व्यक्ति की गरिमा, मनुष्यों के बीच समानता और स्वतंत्रता की खोज भारतीय संविधान के आधारभूत स्तंभ हैं।

319. जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता संविधान की रचना नहीं हैं। संविधान द्वारा इन अधिकारों को प्रत्येक व्यक्ति में निहित मानवीय तत्व के आंतरिक और अविभाज्य भाग के रूप में मान्यता दी गई है।"

20. सुप्रीम कोर्ट द्वारा उपरोक्त घोषणाओं की जांच करने पर यह स्पष्ट है कि भारत के संविधान द्वारा भाग (III) में परिकल्पित गारंटियों को केवल भाग (III) में गठित उपरोक्त अनुच्छेदों के प्रावधानों के अनुसार ही प्रतिबंधित या नियंत्रित किया जा सकता है। इस प्रकार, आवागमन की शक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता का एक अनिवार्य तत्व है और जेल या पुलिस स्टेशन में हिरासत में रखना उस स्वतंत्रता पर एक कठोर आक्रमण है, जैसा कि पतंजलि शास्त्री जे. ने ए.के. गोपालन (सुप्रा) के मामले में माना है।

21. दंड प्रक्रिया संहिता में शिकायत दर्ज होने के बाद जांच करने के तरीके और प्रक्रिया का भी प्रावधान है। हालांकि भारत के संविधान या दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो पुलिस अधिकारी को प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज किए बिना भी व्यक्ति को बुलाने और

हिरासत में लेने का निर्देश देता हो और वह भी मौखिक रूप से। पुलिस कर्मियों द्वारा किए गए ऐसे किसी भी कृत्य को अनुच्छेद 21 के तहत परिकल्पित व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के संदर्भ में देखा जाना चाहिए और यह आवश्यक रूप से निर्धारित करता है कि एक ऐसी प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए जो निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित हो ताकि यह संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 के तहत गारंटीकृत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अतिक्रमण न करे।

22. जैसा कि पहले ही माना जा चुका है कि जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आक्रमण वैध राज्य के संदर्भ में परिभाषित वैध कानून पर आधारित होना चाहिए और इसे प्राप्त करने के उद्देश्य और साधनों के बीच तर्कसंगत संबंध सुनिश्चित करने के लिए आनुपातिक होना चाहिए।

23. वर्तमान मामले में पुलिस कर्मियों द्वारा की गई कार्रवाई संविधान के अनुच्छेद 14, 19, 21 और 22 के तहत याचिकाकर्ताओं को दिए गए अधिकारों का स्पष्ट उल्लंघन दर्शाती है, क्योंकि याचिकाकर्ताओं को मौखिक रूप से बुलाने और उसके बाद पुलिस थाने में हिरासत में लेने की कार्रवाई प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज किए बिना ही की गई।

24. राज्य सरकार अपने जवाबी हलफनामे में ऐसा कोई कानून नहीं बता पाई है जिसके तहत ऐसी प्रक्रिया अपनाई जा सकती हो, खासकर तब जब याचिकाकर्ताओं को बुलाने वाला पुलिस कर्मी मामले का जांच अधिकारी भी नहीं था।

25. आवागमन का अधिकार जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का एक अनिवार्य हिस्सा है, जिसे राज्य के अधिकार के तहत इस तरह से अनदेखा नहीं किया जा सकता। राज्य और उसके साधनों का यह कर्तव्य है कि वे हमेशा सतर्क रहें ताकि संविधान के भाग (III) के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों का उल्लंघन न हो, खासकर बिना किसी वैध कानून के अधिकार के, जिसका व्यवस्थित समाज पर हानिकारक प्रभाव हो।

26. उपर्युक्त के मद्देनजर, राज्य और उसके तंत्रों को यह निर्देश देना आवश्यक होगा कि यदि किसी पुलिस थाने में कोई आवेदन या शिकायत दी जाती है, जिसमें जांच और आरोपी की उपस्थिति की आवश्यकता होती है, तो दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत उचित कार्रवाई की जानी चाहिए, जिसमें ऐसे व्यक्ति को लिखित नोटिस दिया जाना चाहिए, लेकिन वह भी केवल मामला दर्ज होने के बाद। यदि उस समय कोई जांच अधिकारी नहीं है, तो अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों को ऐसा नोटिस या समन जारी करने से पहले थाना प्रभारी की अनुमति/अनुमोदन लेना आवश्यक है। किसी भी मामले में किसी आरोपी या किसी अन्य व्यक्ति को थाना प्रभारी की सहमति/अनुमोदन के बिना अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों द्वारा मौखिक रूप से थाने में नहीं बुलाया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता और सम्मान को पुलिस अधिकारियों के मौखिक आदेशों पर हवा में नहीं उड़ाया जा सकता है। यह उम्मीद की जाती है कि राज्य और उसके तंत्र भविष्य में उपरोक्त टिप्पणियों और निर्देशों के संबंध में सतर्क रहेंगे।

27. उपर्युक्त टिप्पणियों के साथ, बंदी प्रत्यक्षीकरण हेतु यह याचिका अंततः निपटाई जाती है।

28. रजिस्ट्री को निर्देश दिया जाता है कि वह इस आदेश की एक प्रति अपर मुख्य सचिव, गृह विभाग, उत्तर प्रदेश को भेजे, ताकि पुलिस द्वारा उपरोक्त निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए उचित कार्रवाई की जा सके।